सुभद्रा कुमारी चौहान की रचना दृष्टि का वैशिष्ट्य

*डॉ. निर्मला ढैला बोरा

सुभद्रा कुमारी चौहान साहित्य जगत में एक ऐसा ही नाम है, जिन्होंने हर सामाजिक, राजनैतिक एवं रचनात्मक आन्दोलनों में बराबरी की भागीदारी की और अपने समय के सभी जोखिम उठाए। उनकी रचनात्मकता की विशिष्टता और युगानुकूलता की ओर संकेत करते हुए मंजुल भगत लिखती हैं– ''सुभद्रा कुमारी चौहान की वीर एवं रस से ओत–प्रोत ओजस्वी कविता और ऊँचे आदर्शों को सन्मुख रखकर रची गई सोद्देश्य कहानियाँ उस युग की माँग थीं''1

बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय कवि तो अनेक हुए, किन्तु राष्ट्रीय–भावना का जो निराला और अनूठा अंदाज सुभद्रा जी में था, वह अन्यत्र कहीं नहीं था उनके अनोखे राष्ट्रीय–भावना सम्पन्न व्यक्तिव और कृतिव को याद करते हुए मुक्तिबोध कहते हैं– ''वे दिन जिन्हें याद हैं, राष्ट्रीय आन्दोलन के यौवन का नवीन स्पर्श जिन्हें याद है, साहित्यिक भवोल्लास की नव–नवीन लहरियों का वह आत्मविश्वास पूर्ण सुनहला प्रभात जिन्हें याद है, वे बतला सकते हैं कि सुभद्रा जी के काव्य में अनूठापन कहाँ है, किस स्थान पर है और क्यों है?''2 उनके चमत्कार वर्जित काव्य में ऐसी मौलिकता, ऐसी रसग्राहिणी और रसप्रदायिनी शक्ति थी, जिसने उनके साहित्य के माध्यम से उस युग को और उस युग के माध्यम से उनके साहित्य के अध्ययन को सरल बना दिया, ''यह निःसंदेह और निःसंकोच कहा जा सकता है कि सुभद्रा जी के साहित्य में अपने युग के मूल उद्वेग, उसके भिन्न–भिन्न रूप, अपनी आभरणहीन प्रकृत शैली में प्रकट हुए हैं।''3

सुभद्रा जी के साहित्य और छायावादी साहित्य की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि, छायावाद एक विशेष प्रकार का असाधारण मनोलोक लेकर सामने आया जो सर्वसाधारण से बहुत दूर जा पड़ा, इसके विपरीत सुभद्रा जी के मनोलोक में पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन ने स्थान पाया। ''छायावादी कवि, पारिवारिक–सामाजिक–राष्ट्रीय जीवन से आक्रान्त होते हुए भी, उसे अपना न बना सके। अपनी आत्मवादी भूमिका के कारण वे शिक्षित समुदाय की प्रवृत्तियों को अवश्य संतुष्ट करते रहे और आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रधान धारा के रूप में हमने उनको पाया किन्तु इससे सुभद्राजी के साहित्य का महत्व कुछ कम नहीं होता, वरन् वह अधिक हो जाता है, क्योंकि उसके द्वारा आधुनिक हिन्दी–काव्य साहित्य की एकांगिता के कम होने के साथ–साथ एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति होती है।''4

जीवन के विविध और वास्तविक प्रसंगों से सम्बन्धित सुभद्रा जी के काव्य में दो प्रवृत्तियाँ स्पष्ट रूप से देखने को मिलती हैं, प्रथम राष्ट्रीय भावना की प्रवृत्ति एवं द्वितीय दाम्पत्य एवं पारिवारिक भाव की प्रवृत्ति। उनका राष्ट्रीय काव्य– ''हिन्दी की वीर–काव्य–परम्परा का– जिसमें उत्साह, भय और ध्वंस का वर्णन रहता है–का अनुगमन नहीं करता, न व्यक्ति के ध्वंस स्वप्नों के इच्छित विश्वासों पर ही चलता है। सुभद्रा जी के राष्ट्रीय काव्य का सबसे बड़ा गुण है उनकी जन साधारण मानवीयता। यही गुण उनके राष्ट्रीय–काव्य को विशेषता प्रदान करता है।''5

सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपने अन्तर के राष्ट्र प्रेम को आत्मा की सम्पूर्ण सच्चाई से व्यक्त कर लाखों भारतीय युवक – युवतियों को युग–युग की उदासी को त्याग, स्वतन्त्रता संग्राम में अपने को झोंक देने को प्रेरित किया। चित्तौड़ की रानी पद्मिनी और झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई सुभद्रा जी के जीवनादर्श थे। एक ओर विजयादशमी और दूसरी ओर जलियाँवाला बाग पर कविताएं लिखकर सुभद्रा अतीत और वर्तमान दोनों से प्रेरणा लेती है। 'विजयदशमी' कविता राम की विजय को याद कर परतंत्र भारत की बेड़ियों को काटने का संदेश हर भारतवासी को देती है।

'राम समान हमारा भी तो रहा नहीं अब राज सखी! राजदुलारों के तन पर हैं। सजे फकीरी साज सखी। हो असहाय भटकते फिरते बनवासी से आज सखी सीता लक्ष्मी हरी किसी ने गयी हमारी लाज सखी। रामचन्द्र की विजय कथा का भेद बता आदर्श सखी। पराधीनता से छूटे यह प्यारा भारतवर्ष सखी।6

जलियाँवाले बाग में बसंतश कविता सुभद्रा जी की राष्ट्रीय भावुकता का प्रमाण है एवं उनके संवेदनशील हृदय की वास्तविक अभिव्यक्ति है। वे जब बसंत से कहती हैं कि–

'कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा खाकर।
कलियाँ उनके लिए गिराना थोड़ी लाकर।
आशाओं से भरे हृदय भी छिन्न हुए हैं।।
अपने प्रिय–परिवार देश से भिन्न हुए हैं।
यह सब करना, किन्तु बहुत धीरे से आना
यह है शोक स्थान यहाँ मत शोर मचाना।7

तो जैसे बसंत भी शोक संतप्त हो महकना भूल जाता है।

'वीरों का कैसा हो बसंत' कविता राष्ट्रीयभावना की एक विशिष्ट कविता है कवयित्री बसंत का मादक चित्र उपस्थित कर वीरों को सचेत करती हैं कि परतंत्रता के इस युग में बसंत के रास–रंग में डूबने की अपेक्षा वीर वेश धारण कर युद्ध भूमि में प्राणोत्सर्ग करना ही उनका कर्तव्य है। वीर एवं श्रृंगार दोनों रसों को आमने–सामने रख कर वह वीरों के हृदय में देश–प्रेम की अग्नि को और अधिक प्रज्ज्वलित कर देती है।

वीरों का कैसा हो बसंत

x x x x

भर रही कोकिला इधर तान, मारू बाजों पर उधर गान, है रंग और रण का विधान, मिलने आए हैं आदि अन्त, वीरों का कैसा हो बसंत? गल बाँहे हों या हो कृपाण चल चितवन हो या धनुष बाण हो रस विलास या दलित प्राण अब यही समस्या है दुरन्त 'वीरों का कैसा हो बसंत''8

इसी कविता में उन्होंने लंका के प्रसंग को सामने रखकर (लंके तुझमें क्यों लगी आग) युवकों को सावधान किया है कि रास रंग में डूबने के परिणामस्वरूप ही रावण जैसे योद्धा की लंका जल गई।

सम्पूर्ण कविता में सुभद्रा जी ने लंका, कुरुक्षेत्र, हल्दीघाटी के पूर्व घटित प्रसंगों की ओजपूर्ण प्रस्तुति द्वारा वीरों के हृदय में राष्ट्रप्रेम की भावना जाग्रत करने की सफल चेष्टा की है।

*उपाचार्य डी.एस.बी. परिसर नैनीताल कुमाऊँ विश्वविद्यालय

बुन्देलखण्ड में लोक– शैली में गाये जाने वाले छन्द को लेकर लिखी 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' कविता सुभद्रा जी की प्रतिभा और दृष्टि दोनों का परिचय देती है। यद्यपि राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान अंग्रेजी सरकार ने यह काव्यजब्त कर लिया था 'झाँसी की रानी कविता द्वारा सुभद्रा जी मानो इतिहास को ही ललकार रही हैं कि इतिहासकार भले ही सन् 1857 की क्रांति को भुला दे और शासक भले ही सत्य की हत्या कर दें लेकिन लक्ष्मीबाई का बलिदान सदा देशवासियों के हृदय में स्वाधीनता की ज्योति प्रज्वलित रखेगा–

''जाओ रानी! याद करेंगे ये कृतज्ञ भारतवासी
यह तेरा बलिदान गाएगा स्वतन्त्रता अविनाशी।
होवें चुप इतिहास, लगे सच्चाई को चाहे फाँसी।
हो मदमाती विजय, मिटा दे गोलो से चाहे झाँसी
तेरा स्मारक तू ही होगी तू खुद अमिट निशानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी''9

सुभद्रा जी ने अपनी राष्ट्रीय–भाव की कविताओं में प्रत्येक मानवीय–सम्बन्ध को भी राष्ट्रीय परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में ही देखा है। उनकी पारिवारिक भावनायें भी कर्त्तव्याभिमुख हैं। परिवार के व्यक्ति के प्रति अपनी भावनाओं को प्रकट करते हुए वे भावनाओं के द्वारा उसे कर्त्तव्य–च्युत नहीं करतीं वरन् उसे जाग्रत करके एक आदर्श की ओर उन्मुख कर देती हैं। अपनी प्रसिद्ध कविता 'राखी की चुनौती' में वह अपने भाई से कहती हैं–

''आते हो भाई, पुनः पूछती हूँ...................
कि माता के बन्धन की है लाज तुमको?
–तो बन्दी बनो, देखो बन्धन है कैसा
चुनौती यह राखी की है आज तुमको।''10

वे अपने सभी सम्बन्धियों को चाहे वह पति है, भाई है, बहन स्त्रियों आदि को राष्ट्र सेवा की ओर प्रवृत्त करती हैं। मुक्ति बोधा के शब्दों में–''उन्होंने उस राष्ट्रीय आदर्श को जीवन में समाया देखा है, उसकी प्रवृत्ति अपने अन्तःकरण में पाई है। अतः वह अपने समस्त जीवन सम्बन्धों को उसी प्रवृत्ति की प्रधानता पर आश्रित कर देती हैं, उन जीवन सम्बन्धों को उस प्रवृत्ति के प्रकाश से चमका देती हैं। यही उनके राष्ट्रीय काव्य की सबसे बड़ाई, ऊँचाई और सफलता है। उनका राष्ट्रीय काव्य मात्र प्रलयवादी, वृथा–भावकुता पर आश्रित नहीं है। वह जीवन के प्रधान कर्त्तव्य की अभिव्यक्ति के रूप में सामने आता है।11

कविताओं में इनकी प्रेम भावना गृहस्थ–जीवन तक सीमित है। स्वकीया के प्रेम के माधुर्य को अभिव्यक्ति देने वाली अपने ढंग की ये अकेली कवयित्री हैं। उनकी कविताओं में लज्जा और आत्मनिवेदन के साथ ईर्ष्या और उपालम्भ के प्रसंग जीवन की परिपूर्णता के परिचायक है–

(1) ''उन्हें सहसा निहारा सामने, संकोच हों आया
मुँदी आँखें, सहज ही लाज से नीचे झुकी थी में।
कहूँ क्या प्राणधन से, यह हृदय में सोच हो आया
वही कुछ पहले बोल दें प्रतीक्षा में रूकी थी में''12

उपरोक्त कविता में विद्यमान प्रणयभाव् दाम्पत्य जीवन को सरसता एवं सजीवता प्रदान करने वाला है। इसी प्रणय भाव का दूसरा पहलू भी सुभद्रा जी के काव्य में विद्यमान है–

(2) ''बहुत दिनों तक हुई बहस
अब रूखा व्यवहार न हो,
अजी, बोल तो लिया करो तुम,
चाहे मुझ पर प्यार न हो।
जरा–जरा सी बातों पर
मत रूठो मेंरे अभिवानी''13

गृहस्थ जीवन में विद्यमान प्रेम की अभिव्यक्ति करने वाली यह एक अनूठी रचना है, जिसके सम्बन्ध में मुक्तिबोध ने लिखा है– ''मनुष्य–मनुष्य के बीच परस्पर मधुर सम्बन्ध कुछ विशेष प्रसंगों की भूमिका में अधिक उभरते हैं। उनका काव्य के माध्यम से आकलन कवि का एक प्रधान धर्म है। कदाचित् सुभद्रा जी को छोड़कर और किसी ने इस दिशा में प्रयास नहीं किया (मेंथिलीशरण को छोड़कर) इससे यह भी सिद्ध होता है कि हमारा छायावादी कवि जो पूर्ण मानव–सम्बन्धों से बनी हुई मानवता है उससे बहुत दूर जा पड़ा है, यह उस युग की बहुत शोचनीय सीमा है। क्या कारण है कि किसी भी आधुनिक कवि के प्रणय–गीतों में गार्हस्थिकता का सन्दर्भ और पारिवारिकता की भूमिका नहीं रही''14 मुक्तिबोध की दृष्टि में, साहित्य में दाम्पत्य एवं पारिवारिक जीवन के विविध पहलुओं को नजरअन्दाज करना या उन्हें हेय समझना उचित नहीं है–''जीवन के साक्षात विविध प्रसंगों की भूमिकाओं और उसके सन्दर्भों का त्याग आखिर क्यों? क्या काव्य की युनिवर्सल अपील इससे खत्म होती है?''15

इसी सन्दर्भ में मृणाल पाण्डे का यह कथन ध्यान देने योग्य है कि– सुभद्रा कुमारी चौहान के लेखन में राष्ट्रभक्ति और पारिवारिकता में एक सनातनी किस्म का परम्परा बोध है।16

वही प्रश्न उठता है कि क्या यह बोध अनुचित है? क्या इससे उनकी रचनात्मकता की युनिवर्सल अपील खत्म हो जाती है? दूसरी ओर 'घर प्रमुख है तो बुरा क्या है?' कह कर मंजुल भगत सुभद्रा जी के लेखन की इन्टेंसिटी की ओर संकेत करती है– ''कुछ लेखिकाओं द्वारा घर के सीमित दायरे में भी गहन व तीव्रतम अनुभूति को जिया और कलमबद्ध किया गया है''17

गृहस्थ्य– प्रेम के अन्तर्गत ही उनकी शिशु सम्बन्धी रचनाऐं भी आती हैं। बच्चे पति–पत्नी के बीच प्रेम के बन्धन को दृढ़ करते हैं। सुभद्रा जी की रचनाओं में एक ओर शिशुओं की सरलता, पावनता और निर्द्वन्द्वता का चित्रण है, तो दूसरी ओर माँ के अनुपम वात्सल्य का भी चित्रण देखने को मिलता है–

(1) ''में बचपन को बुला रही थी, बोल उठी बिटिया मेंरी; नन्दन–वन सी फूल उठी, यह छोटी सी कुटिया मेंरी''।18

(2) ''ये नन्हे से होंठ; और यह लम्बी–सी सिसकी देखो; यह छोटा सा गला, और यह गहरी सी हिचकी देखो''19

सुभद्रा जी की शिशु सम्बन्धी रचनाओं में उस निस्पृह आनन्द के दर्शन होते हैं जो आनन्द बच्चों को देखकर उत्पन्न होता है, उनमें वह सौन्दर्यबोध है जो शिशु के भोलेपन को देखकर हृदय में उत्पन्न होता है। उन्होंने शैशवावस्था के विविधा चित्र बहुत स्वाभाविकता से प्रस्तुत किये हैं। मुक्तिबोध के शब्दों में–''आधुनिक हिन्दी काव्य साहित्य की एकरसता में सुभद्राजी की झंकार एक नवीन दृश्य उपस्थित करती है। उनकी कविता से सहज मेंत्री का बोध, सामीप्य का भाव उत्पन्न होता है। हृदय स्नेहमय सामीप्यपूर्ण वातावरण में साँस लेने लगता है।''20

काव्य की ही भाँति इनकी कहानियों में भी दो प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। उनकी कुछ कहानियों में उनका राष्ट्रप्रेम एवं नौकरशाही का खुला विरोध देखने को मिलता है तो कुछ कहानियाँ सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित करती हैं।

'पापी पेट' ब्रिटिश सरकार की खिदमत में अपना

सर्वस्व गँवा देने वाले रायसाहब की कहानी है। ''क्षमा करना भाई इस पापी पेट के कारण लाचार है, वरना क्या हमारे दिल में देश प्रेम नहीं है''21 सरीखी विचारधारा वाले रायसाहब को उनका ही देश प्रेमी पुत्र उनकी भूख की कीमत बता देता है। राय साहब द्वारा सभा में किये गये लाठी चार्ज में उनके एकमात्र पुत्र गोपू की मृत्यु हो जाती है और रायसाहब के शून्य हृदय में बार–बार एक ही प्रश्न गूँजता है ''यह सब किसके लिए?'' और उत्तर भी उनके मस्तिष्क में गूँजता है– ''पापी पेट के लिए''।

''अमराई कहानी में सरकार का खुला विरोध देखने को मिलता है। सरकार के जबरजस्त खैरख्वाह ठाकुर साहब को तब सरकार की असलियत और उसकी दमन नीति का ज्ञान होता है जब अमराई में हुए लाठी चार्ज में उन्हीं का पूरा परिवार घायल हो जाता है और उनके पुत्र की मृत्यु हो जाती है। ''जब आँख खुले तभी सवेरा'' इस भावना से प्रेरित होकर ठाकुर साहब रायसाहब और आनरेरी मजिस्ट्रेट के पद से इस्तीफा दे देते हैं लेकिन उनकी अमराई राष्ट्र प्रेमियों के काम आने से पहले ही छीन ली जाती है और नीलाम कर दी जाती है ''जहाँ हर साल बरसात में बच्चे झूला झूलते थे वहीं पर पुलिस के जवानों के रहने के लिए पुलिस चौकी बनने लगती है''22

जब सम्पूर्ण भारत को देश प्रेम एवं क्रान्ति की लहर ने अपने रंग में रंग दिया था तो बाल हृदय जो सबसे अधिक संवेदनशील एवं प्रत्येक भावों के लिए सबसे अधिक उर्वर भूमि का काम करता है इस लहर से कैसे अछूता रह सकता था। 'गुलाब सिंह' ऐसे ही देश प्रेमी भाई बहनों की कहानी है जो भारत ही नहीं किसी भी परतन्त्र देश के बच्चे हो सकते हैं क्योंकि देश प्रेम का जज्बा हर देशवासी के भीतर होता है।

सुभद्रा कुमारी चौहान की सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित करने वाली कहानियों को कुछ विशिष्ट वर्गों के अन्तर्गत रखा जा सकता है। इन कहानियों में से कुछ कहानियाँ विधवा जीवन की विडम्बनाओं पर आधारित है जैसे किस्मत, असमंजस, एकादशी इत्यादि।

'किस्मत' कहानी की किशोरी विधवा है। उसके जीवन को नरक तुल्य बनाने वाली उसकी सास नहीं बल्कि उसकी किस्मत है जिसके आगे किशोरी के श्वसुर भी लाचार होकर अपनी पुत्री से कहते हैं कि वे अपनी किस्मत पर रोते हैं। भोली मुन्नी अपने पिता व भौजी दोनों को माँ और किस्मत के आगे विवश देखकर माँ और किस्मत में एक रिश्ता कायम कर अपने पिता से कहती है कि जरूर किस्मत अम्मा की कुछ लगती है ''तभी तो वह तुम्हें भी और भौजी को भी रूलाया करती है'' I23

'असमंजस' की नायिका कुसुम और 'किस्मत' की नायिका किशोरी में काफी वैषम्य है। किशोरी अनपढ़ एवं स्वयं पर आश्रित है। कुसुम पढ़ी लिखी है और आत्मनिर्भर है। दोनों के जीवन में निराशा तो है किन्तु किशोरी की निराशा का कोई अन्त नहीं है जबकि कुसुम बसंत के रूप में एक मित्र पाने की आशा से आश्वस्त है।

'एकादशी' हिन्दू संगठन एवं शुद्धिकरण के जोरदार प्रचार के दौरान लिखी विधवा जीवन पर आधारित एक मार्मिक कहानी है जो इस तथ्य को उद्घाटित करती है कि बचपन के संस्कारों से व्यक्ति को कभी भी मुक्ति नहीं मिलती। 'एकादशी' कहानी में ब्राह्मणी बाल विधवा का पुनर्विवाह कर उसका धर्म तो परिवर्तित कर दिया जाता है लेकिन मुस्लिम धर्म अपना लेने के पश्चात् भी उसके हिन्दू धर्म के संस्कार मिटते नहीं है। डॉ0 मिश्रा द्वारा जब बीमारी का इलाज हेतु उसे मुर्गी का शोरबा पिलाने की कोशिश की जाती है तब वह बड़े कातर शब्दों में कहती है– ''डॉक्टर साहब, मुझे माफ करें, में शोरबा नहीं ले सकती''। डॉक्टर मिश्रा के पूछने पर कि क्यों नहीं ले सकती, वह कहती है– ''आज एकादशी है'' I24

भग्नावशेष, होली, मझली रानी, दृष्टिकोण, आहूती ग्रामीण इत्यादि कहानियाँ नारी के अस्तिव पर प्रश्नचिन्ह लगाती हैं।

'दृष्टिकोण नारी की अस्तिवहीनता का चित्र प्रस्तुत करने वाली एक जबरदस्त कहानी है। आत्मभिमानिनी, दृढ़निश्चयी एवं स्वतन्त्र व्यक्तिव वाली निर्मला जब गर्भवती बिट्टन को अपनी मर्जी से अपने घर में आश्रय नहीं दे पाती तब उसे अपनी वास्तविक स्थिति का ज्ञान होता है कि वह घर की मालिकिन होकर भी नौकरतुल्य है। ''उसके चेहरे में कोई विशेष परिवर्तन न था, न तो यही प्रगट होता था कि खुश है और न यही कि नाराज है। हाँ उसमें एक ही परिवर्तन था कि अब उसके व्यवहार में हुकूमत की झलक न थी। वह अपने को उन्हीं दो तीन नौकरों में से एक समझती थी, जो घर में काम करने के लिए होते हैं मगर जिनका कोई अधिकार नहीं होता'' I25

'आहुती कहानी भी कुन्तला के अस्तिव पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। उसके पति राधेश्याम उसकी प्रतिभा उसी सीमा तक निखारते हैं जिस सीमा तक वे चाहते हैं। सीमा का अतिक्रमण होते ही वे कुन्तला की सम्पूर्ण काव्य–साधना को अग्नि में होम कर देते हैं। राधेश्याम पहले तो कुन्तला के साहित्य प्रेम को हवा देते हैं– ''कुन्तला तुम्हारा लेख बहुत ही अच्छा है मुझे नहीं मालूम था कि तुम इतना अच्छा लिखती हो नहीं तो तुमसे सदा लिखते रहने का आग्रह करता। तुम्हारे इस लेख में कहीं कहीं भाषा की त्रुटियाँ हैं जरूर, पर ये मेरे मित्र अखिलेश्वर ठीक कर देंगे। अब तुम रोज कुछ लिखा करो''26 किन्तु पुरुष का शक्की मन किस सम्बन्ध को क्या मोड़ दे दे कुन्तला को जब तक इस बात का ज्ञान होता है तब तक उनकी सम्पूर्ण काव्य साधना अग्नि की भेंट चढ़ चुकी होती है– ''उसके लेख, कविताएँ, कापियाँ, पेन्सिलें और अखिलेश्वर द्वारा उपहार में दी हुई फाउन्टेन पेन सब समेंट कर किसी ने आग लगा दी है। उसी अग्नि में अखिलेश्वर का वह प्यारा चित्र जो कुछ ही क्षण पहले ड्रांइगरूम की शोभा बढ़ा रहा था धूं धूं करके जल रहा है और ऊपर उठती हुई लपटें मानों कह रही हैं– कुन्तला यह तुम्हारे साहित्यिक जीवन की चिता है'' I27

राही, सुभागी इत्यादि कहानियाँ सुभद्रा जी के जेल जीवन से सम्बन्ध रखने वाली कहानियाँ हैं। दोनों ही कहानियाँ कहानी कम उनके जेल जीवन के संस्मरण अधिक प्रतीत होते हैं।

जम्बक की डिबिया अभियुक्त कहानियाँ, दलितों एवं शोषितों के प्रति सुभद्रा जी की सहानुभूति की परिचायक है। छोटी सी जम्बक की डिबिया खोई हो या मूल्यवान सोने की चेन उच्च वर्ग की शक की सुई निम्न व शोषित वर्ग पर ही आकर टिकती है। सामाजिक जीवन का यह घृणित यथार्थ इन कहानियों में उजागर हुआ है।

सुभद्रा जी की कविताओं में तो दाम्पत्य प्रेम से इतर प्रेम के दर्शन नहीं होते, लेकिन कुछ कहानियों में अवश्य इस इतर प्रेम की उपस्थिति दिखाई देती है। 'थाती' कहानी की नायिका अकारण संदेह किये जाने के कारण विद्रोहिणी बन गई है। उसका दुःख उसकी पीड़ा पति तो समझ नहीं पाया, गाँव

का ही एक नवयुवक जो उसके दुःख को समझा है वह उसी को अपना सब कुछ समझ बैठती है। उस नवयुवक के गाँव से चले जाने पर वह उन्मत हो उठती है– ''में एक बार उन्हें और देखना चाहती हूँ। मेंरी यह पीड़ा, मेंरा यह उन्माद उन्हीं का दिया हुआ तो है।''28

'उन्मादिनी' कहानी की नायिका जिससे प्रेम करती है उसकी पत्नी नहीं बन पाती है और जिसकी पत्नी बनती है उससे कभी प्रेम नहीं कर पाती है। प्रेमी के अपने ही यहाँ माली बन जाने पर उसका सोया हुआ प्रेम पुनः जाग उठता है और उसकी मृत्यु के पश्चात् वह अपनी सुध–बुध खो बैठती है। ''लोग मुझे उन्मादिनी कहते हैं। क्यों कहते हैं, यह तो कहने वाले ही जानें; किन्तु मेंने आज तक कोई भी ऐसा काम नहीं किया है जिसमें उन्माद के लक्षण हों। में अपने सभी काम नियमपूर्वक करती हूँ। क्या एक भी दिन में उस समाधि पर फूल चढ़ाना भूली हूँ? क्या ऐसी कोई संध्या गई है जब मेंने वहां दीपक नहीं जलाया है? कौन सा ऐसा सवेरा हुआ है जब ओस से धुली हुई नई–नई कलियों से मेंने उस समाधि को नहीं ढँक दिया? फिर भी में उन्मादिनी हूँ'' ।29

'अनुरोध कहानी की वीणा निरंजन को मित्र समझने के साथ–साथ उसके प्रति एक प्रकार का भावात्मक लगाँव भी महसूस करती है। निरंजन की पत्नी के पत्र को पढ़कर वह अपने आप को धिक्कारती भी है किन्तु जो भावात्मक लगाँव उसका निरंजन के प्रति है उसमें वह बढ़ोत्तरी ही पाती है। उपरोक्त सभी कहानियों में दाम्पत्य प्रेम से इतर प्रेम का खुला स्वीकार है।

मेंहरुन्निसा परवेज लिखती हैं कि ''स्वतन्त्रता की लड़ाई के समय जो स्वर साहित्य में उभरकर आया वह राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ा था, देश प्रेम का था। स्वतन्त्रता के बाद नारी लेखन में मुक्ति के स्वर तेजी से उभरे। नारी लेखन द्वारा नारी जीवन की व्यथा–कथा लिखी गई। ऊषा प्रियंवदा, चंद्रकिरण सौनरिक्सा, मन्नू भण्डारी, शशिप्रभा शास्त्री, कृष्णा सोवती, शिवानी आदि ने नारी की अस्मिता तथा नारी मुक्ति के लिए कहानियाँ लिखीं।''30 लेकिन सुभद्रा जी की अनेक कहानियाँ ऐसी हैं, जिनमें हम उपरोक्त स्थितियों की उपस्थिति को एक सिरे से खारिज नहीं कर सकते। 'किस्मत', 'असमंजस', 'एकादशी' कहानियाँ नारी जीवन की व्यथा की करुण अभिव्यक्ति है। 'भग्नावशेष', 'होली', 'मझली रानी', 'दृष्टिकोण', 'आहुति' आदि कहानियाँ नारी को उसकी अस्तित्वहीनता का बोध कराने की पहल करती दिखाई देती हैं और स्वातन्त्रयोत्तर महिला लेखिकाओं की रचनाओं में उपस्थित नारी–अस्मिता का बीज–रूप भी यही कहानियाँ हैं। यही नहीं पराधीनता के उस युग में (नारी के लिए दोहरी पराधीनता) दाम्पत्य प्रेम से इतर प्रेम की कहानियाँ लिखने का साहस भी सुभद्रा जी ने ही किया था (थाती, उन्मादिनी इत्यादि कहानियों में)।

हाँ, इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि उनकी कई कहानियों में सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करने की कोशिश दिखायी देती है लेकिन अन्त आते आते वह कोशिश विफल हो जाती है दृष्टिकोण, आहुति इत्यादि ऐसी ही कहानियाँ हैं। इस दृष्टि से थाती, उन्मादिनी अनुरोध कहानियाँ साहसिक रचनाऐं कही जा सकती हैं, लेकिन इन कहानियों की नायिकाऐं भी विद्रोह करते करते अन्त में या तो थक हार जाती हैं या फिर उन्माद की अवस्था में पहुँच जाती हैं।

कुछ कहानियों की ही भाँति सुभद्रा जी की कविताओं की भी कुछ पंक्तियों बरबस अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करती हैं– ''है कलम बंधी स्वच्छन्द नहीं'' पराधीनता के उस युग में जब अंग्रेजी शासन के खिलाफ कुछ भी लिखना अपराध था, नारी दोहरी पराधीनता भोग रही थी। एक ओर अंग्रेजी शासन की पराधीनता और दूसरी ओर पुरुष की पराधीनता। ऐसी स्थितियों में उपरोक्त पंक्ति अत्यधिक मर्मस्पर्शी एवं अर्थपूर्ण बन पड़ती है, आधुनिक साहित्य जगत में आजकल के प्रचलित शब्द 'बोल्ड लेखन' की वास्तविक परिचायक। 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी'' पंक्ति में प्रयुक्त मर्दानी शब्द भी त्तकालीन नारी की शक्ति को कम आँकने को व्यंजित करता है। नारी यदि वीरंगना है तो वह पुरुष तुल्य है वरना वह मात्र एक नारी है। स्वयं सुभद्रा जी इसकी मिसाल हैं। इतना सशक्त लेखन, राजनैतिक आन्दोलनों में इतनी सक्रिय भागीदारी के बावजूद हिन्दी जगत उन्हें वह स्थान नहीं दे पाया जिसकी वह अधिकारी थीं उनके राष्ट्रीय भावना सम्पन्न गीत वीरों का कैसा हो बसंत की तर्ज पर लिखे गीत ''ऐ मेंरे वतन के लोगों जरा आँख में भर लो पानी'' गीत तो देशभर में प्रसिद्ध हुआ लेकिन उनका यह गीत मात्र माध्यमिक स्तर की कक्षाओं के पाठ्यक्रम तक सीमित होकर रह गया। लेकिन सुप्रसिद्ध लेखिका सूयबाला का यह कथन आश्वस्त करता है कि सुभद्रा कुमारी चौहान जैसे सशक्त लेखन का उत्तराधिकार और प्रसाद आत्मविश्वस्त करने वाला है, यही वह उत्तराधिकार व प्रसाद है जो आगे आने वाली पीढ़ी के सशक्त लेखन में दिखाई देता है।31

सन्दर्भ ग्रंथ

1. इंडिया टुडे, 1997, साहित्य–वार्षिकी, पृ0– 23
2. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्याएं, प्रथम संस्करण, 1982, पृ0–76
3. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्याएं, प्रथम संस्करण, 1982, पृ0–76
4. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्याएं, पृ0–78
5. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्याएं, पृ0–86
6. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–80
7. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–70
8. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–111
9. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–64
10. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–
11. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्याएं, पृ0– 84–85
12. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–13
13. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0–35
14. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्यायें, पृ0–79
15 गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्यायें, पृ0–80
16. इंडिया टुडे, 1997, साहित्य–वार्षिकी, पृ0–24
17. इंडिया टुडे, 1997, साहित्य–वार्षिकी, पृ0– 23
18. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 4
19. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 53
20. गजानन माधव मुक्तिबोध, समीक्षा की समस्याएं, पृ0–80
21. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 19
22. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 91
23. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 51
24. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 61
25. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 43
26. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 66
27. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 68
28. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 72
29. सुभद्रा समग्र, सं0–डॉ0 निर्मला जैन, पृ0– 106
30. इंडिया टुडे, 1997, साहित्य वर्षिक, पृ0– 26
31. इंडिया टुडे, 1997, साहित्य वर्षिक, पृ0– 27